त्रिपुरसुन्दर्यै नमः
ॐ जगदम्बिकायै नमः

अम्बस्तवः

धर्माचार्यकृत

पंचस्तवी

का चौथा स्तव

ह्रीं

कश्मीरी रूपांतरकार
प्रो० ओंकारनाथ च्रंगू

मिलने का पता :-
भगवान गोपीनाथ जी आश्रम
- बोड़ी उदयवाला, जम्मू
- पम्पोश एन्कलेव, नई दिल्ली- 48

मई 1999 मूल्य 5/-

त्रिपुरसुन्दर्यै नमः
ॐ जगदम्बिकायै नमः

अम्बस्तवः

धर्माचार्यकृत

पंचस्तवी

का चौथा स्तव





कश्मीरी रूपांतरकार
प्रो० ओंकारनाथ च्रंगू

मिलने का पता :-

भगवान गोपीनाथ जी आश्रम

☛ बोडी उदयवाला, जम्मू

☛ पम्पोश एन्कलेव, नई दिल्ली- 48

मई 1999 मूल्य 5/-

उपोद्घात।

प्रस्तावना।

हमारे अनेकों सिद्ध महापुरुषों ने उत्कृष्टतम दर्शन विद्या के सिद्धान्तों को तथा अतीव उत्तम साधना के रहस्यमय प्रकारों को सुन्दर और मनोहर कविता के माध्यम से प्रकट किया है, क्योंकि दर्शन विद्या के लिए उपयोगी तर्क अतीव कठोर और पर्याप्त मात्रा में रुक्ष से प्रतीत होते हैं, विशेषकर इस मार्ग में सक्रिय प्रवेश करते समय । अतः हमारे उत्कृष्ट योगियों ने उन आध्यात्मिक सिद्धान्तों का वर्णन सुन्दर और सुमनोरम कविता के माध्यम से करके रखा है। दार्शनिक तत्त्वों का इस प्रकार का निरूपण करने में शैव-शाक्त सिद्धान्तों ने सर्वोत्कृष्ट स्थान प्राप्त किया है। ऐसी दार्शनिक कविता को प्रायः स्तोत्रकाव्य का रूप दिया गया है। अत्युत्कृष्ट और अतीव सुन्दर दार्शनिक स्तोत्रों के निर्माण कार्य में महर्षि दुर्वासा अग्रणीय कोटि में गिने जाते हैं। इस समय भी उन के तीन दार्शनिक स्तोत्र मिल रहे हैं। (१) परशम्भुमहिम्नस्तोत्र, (२) त्रिपुरामहिमस्तोत्र और (३) ललितास्तव-रत्न।

दार्शनिक स्तोत्र काव्य की ऐसी सुमधुर परम्परा में अनेकों ही भक्त योगियों की रचनाएं सुप्रसिद्ध है। उन्हीं योगियों में से एक हैं धर्माचार्य, जिन्होंने एक सुप्रसिद्ध शाक्त स्तोत्र-काव्य की रचना कर रखी है। इस काव्य के पांच खण्ड हैं, जिनमें शैवी और शाक्ती दर्शन-विद्या के रहस्यों को और वैसी रहस्यमयी उपासना की अनेकों साधनाओं को काव्यात्मक शैली में स्पष्ट करके रखा गया है । ऐसी साधनाओं को प्रायः पूरी तरह से स्पष्ट नहीं किया जाता है, क्योंकि वैसा करने में यह आशंका बनी रहती है कि कहीं कोई अनधिकारी व्यक्ति उनका अभ्यास करता हुआ उस अभ्यास से प्राप्त योग-शक्तियों का दुरुपयोग न कर जाए। अतः उन्हें थोड़ा-थोड़ा ही स्पष्ट किया जाता है; जिससे दीक्षित साधक ही उनसे समुचित लाभ प्राप्त कर सकें और अनधिकरी साधक उनका दुरुपयोग न कर पाएं। श्रीधर्माचार्य-कृत पञ्चस्तवी के पाँचों ही स्तोत्रों में शाक्त साधन के अतीव उत्कृष्ट प्रकारों का वर्णन संकेत मात्र से किया गया है। उस संकेत को

वही साधक पकड़ सकते हैं जो वस्तुतः उन उत्कृष्ट साधनाओं के समुचित अधिकारी हों।

पञ्चस्तवी नामक ग्रन्थ-रत्न इस तरह से एक ओर से सिद्धों की दर्शन विद्या के प्रकारों का दिग्दर्शन करा देता है और दूसरी ओर से एक सुमधुर कविता के माध्यम से मानव हृदय को आह्लादित करता है। इस स्तोत्र काव्य के पाँच खण्ड हैं। पाँचों अतीव सुन्दर और सुमनोहर हैं। फिर इन पाँचों के भीतर जो चौथा स्तोत्र है वह तो अपने काव्यात्मक और दर्शनात्मक सौन्दर्य से साधक जनों को तथा सामान्य जनता को भी परम आह्लाद के मानस-सरोवर की सुमधुर लहरों में मानो घुमाता रहता है। इस स्तोत्र का नाम है अम्बास्तवः। अम्बा माता को कहते हैं। माता के समान आह्लादकारी व्यक्ति इस संसार में प्रायः कोई नहीं होता है। अतः यह अम्बास्तव पाँचों ही स्तोत्रों में सबसे अधिक मधुर है। पाँचवां स्तोत्र 'सकलजननी स्तवः' कहलाता है। समस्त जनता की माता के स्नेह के अधिकारी तो सभी लोग होते हैं; जब कि व्यक्तिगत माता का स्नेह एक मात्र उसके अपने पुत्र को ही मिला करता है। सम्भवतः इसी भाव को दृष्टि में रखते हुए महाकवि श्री धर्माचार्य ने जगन्माता की स्तुति इस 'अम्बास्तोत्र' में माता के उसी रूप की आराधना की है जिसे वह अपनी साक्षात् माता के ही रूप में देखता हुआ तथा उसकी मातृ-ममता के प्रसार के रस के समुद्र में गोते खाता हुआ आनन्द विभोर होता रहा। तभी तो इस स्तोत्र के लिए उसने शिखरिणी जैसे जटिल छन्दों की अपेक्षा वसन्ततिलका नामक सुकोमल छन्द का आश्रय लिया है। यह सुकोमल छन्द इस स्तोत्र की रम्य मधुरता को खूब निखारता रहता है।

इस स्तोत्र में सैद्ध-दर्शन की विविध साधनाओं के प्रति अतीव सुमधुर शब्दावली के द्वारा संकेत किए गए हैं। जैसे छटे और तीसवें पद्य में कुण्डलिनी योग के प्रति और ग्यारहवें में रहस्यभूता वेधदीक्षा के प्रति । फिर काव्यात्मिका शैली में व्यतिरेक अलंकार को स्थान देते हुए कवि ने जगदम्बा पराशक्ति को शिव से अधिक उत्कृष्ट ठहराया है और वह भी सुमनोहर काव्य-शैली में, जैसे श्लोक संख्या ६, ७, ८, ९, १०, १६ और २५ में। रहस्यमयी कामकला का संकेतात्मक निरूपण सुमनोहर काव्यशैली में तीसवें और बीसवें पद्य में किया गया है। जगन्माता अपने भक्तों को भोग और मोक्ष दोनों ही फल दिया करती है। माता की ऐसी लीला का सुमधुर वर्णन कई एक श्लोकों में किया गया है, जैसे १२वें से

१४वें तक तथा २३वें में भी।

देवी की उपासना से भक्त को अपूर्व आनन्द के चमत्कार का जो अनुभव होता है, उसका सुन्दर वर्णन १६वें श्लोक में मिलता है। फिर इस स्तोत्र की उत्कृष्ट विशेषता यह है कि इस में दार्शनिक तत्त्वों का, शैवी और शाक्ती उपासना के रहस्यों का, जीवन के दोनों ही फलों का, अर्थात् भोग और मोक्ष दोनों ही का, तथा उपासना के अन्य अन्य विविध फलों का अतीव मनोहर वर्णन सुमधुर काव्य शैली में इस तरह से किय गया है कि भक्त लोग इसको गाते हुए अनायास ही शिव-शक्ति के साथ तन्मयता का स्वाद ले सकते हैं।

इस स्तोत्र-रत्न की रचना कविवर ने संस्कृत भाषा में की है। क्योंकि देवगणों को संस्कृत भाषा अतीव प्रिय लगती है। साधारण जनता जो संस्कृत भाषा को नहीं जानती है, उसे भी स्तोत्रों की शब्दात्मिक मधुरता का आस्वाद आ ही जाता है। उस तन्मयता का फल यह होता है कि जगदम्बा उन भक्तों पर प्रसन्न होकर उनका कल्याण करती है। देवता तो प्रेममयी और श्रद्धामयी भक्ति से सन्तुष्ट हो जाते हैं।

प्रो० च्रंगू महोदय ने संस्कृत भाषा को न जानने वाले भक्त-जनों के हित के लिए इन पाँचों ही स्तोत्रों के समस्त श्लोकों को काश्मीरी भाषा में अनुवाद करते हुए साधारण भक्त जनता का बड़ा ही उपकार किया है। प्रत्येक पद्य के साथ ही साथ उन्होंने उसका पद्यानुवाद कश्मीरी भाषा में स्पष्ट कर रखा है। प्रत्येक संस्कृत श्लोक को गाकर उसके भावानुवाद को भी साधारण जनता कश्मीरी भाषा में गा-गा कर जगदम्बा की उपासना में तन्मयता को प्राप्त कर सकती है। इस तरह से अनुवादक महोदय ने साधारण भक्त जनता का बहुत बड़ा उपकार किया है। इस बात के लिए वे धन्य हैं और जगदम्बा का त्वरित अनुग्रह उन पर होता ही रहेगा, ऐसी हमारी धारणा है।

-डॉ० बलजीनाथ पण्डित

4 मई 1999

जम्मू

परिचय

पञ्चस्तवी एक अद्‌भुत स्तोत्र है। कश्मीर तथा दक्षिण भारत में इसका प्रचार प्राचीनकाल से चला आ रहा है। इसके रचयिता श्री धर्माचार्य को निर्धारित किया गया है। परन्तु उनके जन्म-कर्म के बारे में अभी तक कोई निश्चय नहीं हो पाया है। भक्ति और कुण्डलिनी योग सम्बन्धी इन स्तुति-श्लोकों के हिन्दी, अंग्रेज़ी तथा काश्मीरी भाषाओं में कई अनुवाद छप चुके हैं, परन्तु शाक्तमतानुसार इसके सूक्ष्म अर्थ (रहस्यार्थ) प्रकट करने के प्रयास बहुत कम हुए हैं। कश्मीर के विद्धद्वर्य पण्डित हरभट्ट शास्त्राी ने इस स्तव-रत्न पर संस्कृत में एक बिस्तृत टीका लिखी है जिसमें वेद, तन्त्र, पुराण आदि ग्रन्थों से उद्धारण लेकर बहुत हद तक रहस्य-निर्देशन किया गया है।

पञ्चस्तवी का काश्मीरी भाषा में पद्यानुवाद कई वर्ष पूर्व पहली बार पण्डित जियालाल जी सराफ ने किया। यह साधारण मधुर अनुवाद अति लोकप्रिय बन गया। पण्डित जनता में मा त्रिपुरसुन्दरी के प्रति भक्तिभाव अधिक जाग्रत हुआ। बच्चे, बूढे स्त्री-पुरुष इन मीठे पद्यों को देवालयों मन्दिरों और घरों में प्रेम-पूर्वक गाते हैं और शान्ति सुख का अनुभव करते हैं। सूक्ष्म अर्थ का अनुभव करते हुए इन श्लोकों के पाठ से इच्छित फल की प्राप्ति होती है, ऐसी श्रद्धालु जनता की धारंणा है।

प्रो० ओंकारनाथ च्रंगू ने कई वर्ष पूर्व पञ्चस्तवी के अर्थ को कश्मीरी पद्य में अधिक स्पष्ट करने का प्रयत्न किया था, परन्तु कुछ कठिनाइयों के कारण काम रुका पड़ा। प्रकृति नियम के अनुसार समय आने पर ही फल पकता है। देश से निर्वासित होने पर हम से कई तो बिछुड गये पर कई और मिले। चिदानन्दमयी भगवती महामाया की प्रेरणा से च्रन्गू जी हमारे सम्पर्क में फिर आये, सत्संग गोष्ठी में आने लगे और पंचस्तवी का अध्ययन करके अपने प्रयास को मानसिक सन्तोष से पूर्ण करने का निश्चय किया। फलत: पंचस्तवी का कश्मीरी भाषा में यह सुन्दर रूपान्तर किया। इस कार्य में उन्होंने अपनी काव्य-प्रतिभा तथा गम्भीर अवगाहन का परिचय दिया। मैंने इस रूपान्तरण को ध्यान से पढ़ा और उनके परिश्रम का अनुमोदन करता हूँ। उन्होंने केवल शब्दार्थ को ही न लेकर लक्ष्यार्थ द्वारा तत्त्वार्थ को आलंकारिक भाषा में रूपान्तरण करने का प्रयास किया है। इस कार्य में उनको मेरी सहायता सुलभ रही। जगन्माता से हमारी प्रार्थना है कि वह इस कार्य को यथायोग्य पूर्ण करें, जिससे उनको सन्तोष और जनता को भी यथार्थ लाभ होगा।

-जानकीनाथ कौल 'कमल'

दो शब्द

पञ्चस्तवी शैवी तथा शाक्ती दर्शन विद्या के कई रहस्यों के अनुभवों, सुक्षमताओं तथा साधन-क्रियाओं को दर्शाने वाला एक विशेष काव्य ग्रन्थ है। शाक्त मतानुसार इसके पांच खण्ड 'पांच स्तव' जगदम्बा पराशक्ति के पांच प्रधान स्वरूपों की साधना की ओर निर्देश करते हैं।

यह चौथा खण्ड 'अम्बस्तव' उस पराशक्ति के पांच स्वरूपों में से उसके आनन्द-शक्ति वाले स्वरूप की वर्णनात्मक रचना है। शक्ति के आनन्द-स्वरूप को माता के रूप में वर्णन करना कितना आनन्दमय होता है, यह वही साधक जान सकते हैं, जो ज्ञान, ध्यान, तप, पूजा आदि से प्रेरित होते हुए उसके मातृ-स्वरूप का दर्शन करते हैं। इस स्तव में उसी पालनहार मातृस्वरूपा भगवती की गुण-गणना की गई है। स्तोत्र के बीसवें श्लोक में पराशक्ति के विश्वव्यापिनी, भावाभावात्ममय रूप को "निःसारमेव निखिलं त्वदृते यदि स्यात्" (यह सारा विश्व तुम्हारी सत्ता के बिना सत्ता रहित ही हो जाता), इस वाक्य के द्वारा प्रकट किया गया है। कुण्डलिनी शक्ति अमतृरूपिणी है और अमृत के प्रवाह से परिपक्व साधक को सदा आनन्दमय अवस्था प्रदान करती है। साधारण भक्त भी जब श्रद्धा पूर्वक तन्मयता से शक्ति के अम्बा स्वरूप की आराधना करते हैं तो अवश्य ही वे तत्काल आह्लाद को प्राप्त करते हैं। मातृ-भाषा सर्वथा मधुर लगती है, इसी कारण इसके साधारण तथा सूक्ष्म भाव को कश्मीरी भाषा में पद्यरूप अनुवाद देनं में मैं कहां तक सफल रहा हूँ, यह पाठक महानुभाव ही निर्णय कर सकते हैं।

भगवान गोपानीथ जी महाराज, जगतगुरु रूप में सदा ही उन भक्तों पर अनुग्रही रहे हैं जो भक्ति पूर्वक श्रद्धा भाव से उनके शरण में आते रहे हैं। क्षीर भवानी (तुलमुल), प्रद्युम्नपीठ (चक्रेश्वरी - हारीपर्वत) पुखरीबल - कुण्ड (हारीपर्वत) में होता हुआ पञ्चस्तवी का पाठ तथा गायन उन्हें अति प्रिय था। पञ्चस्तवी का कश्मीरी भषा में किया गया यह मेरा पद्यानुवाद उन्हीं के अपार अनुग्रह से ही सम्भव हो सका है। इसमें मुझे लेश-मात्र भी सन्देह नहीं और इसे उन्हीं के प्रति अर्पण भी किया जा रहा है।

पञ्चस्तवी के रचनाकार महामहिम श्री धर्माचार्य ने कुण्डलिनी योग की तथा शैव-शाक्त योग की साधना के कई रहस्यमय उपासना क्रमों को रहस्यमय ढंग से ही वर्णित किया है, जिससे कोई सिद्ध गुरु ही साधक को भली भान्ति परिचित करा

सकता है। पर साधारण भक्त जनों को इसकी ओर प्रेरित करने के लिये इसका पाठ और नित्य गायन ही पर्याप्त है। मैंने पञ्चस्तवी का अध्ययन अपने विद्या-गुरु श्रीमान पण्डित जानकीनाथ जी 'कमल' के चरणकमलों में बैठ कर कई वर्षो तक किया, पहला पाठ उन्होंने यही सिखाया कि इस काव्यरत्न को सुमधुर लय से गा-गा कर आनन्द का अनुभव लेना सीखो, तत्पश्चात भावार्थ का अध्ययन करके इस को गाते हुए अनायास ही शिव-शक्ति के साथ तन्मयता का स्वाद ले सकते हो। कश्मीरी भाषा में इसी स्वाद को आपके सामने लाने में और संवारने में मेरा मार्ग दर्शन उन्होंने ही किया है। मैं इन्हें सादर प्रणाम करता हूँ।

इस अनुवाद में सूक्ष्म भावों को सार्थक भाषा में प्रस्तुत करने में जो परामर्श और सहायता आदरणीय डा० बलजीनाथ पण्डित संस्कृत भाषा के वरिष्ठ आचार्य ने की ताकि अनुवाद यथार्थता और स्पष्टता से वंचित न रह जाये, ऐसे गुरु-रूप विद्वान का आभार प्रकट करने में मेरे पास शब्द ही नहीं, बस उनका आशीर्वाद चाहिए।

इस चौथे 'अम्बस्तव' के पद्यरूप को छापने तथा आप तक पहुंचाने में मेरी कुछ आर्थिक सहायता प्रिय मित्र श्री चमनलाल जी दुरानी, तथा पञ्चस्तवी प्रेमी प्रो० ओंकारनाथ भान ने की, अन्यथा यह पुस्तिका भक्तों तक पहुंचाने में कठिनाई पड़ जाती। मेरा उत्साह बढाने में गुरु-भाई श्री शिब्बन जी तुर्की तथा श्री राजेन्द्र कम्पासी ज़ी ने कम्प्यूटर कम्पोज़िंग में शुद्ध लिपि निकाल कर सराहणीय कार्य कर के जो समय बचाया मैं उनका भी आभारी हूँ। श्री सोहनलाल खुर्दी की प्रेरणा और भगवान गोपीनाथ जी ट्रस्ट के मित्रों ने अशोक जी रैणा की मधुर आवाज़ में इस का कैसेट भरवा कर आपके सामने जो पेश किया, इसके लिये मैं इन सब. प्रेमी भक्तों का सदा आभारी रहूँगा।

- ओमकारनाथ च्रंगू

२ अप्रेल १९९९

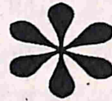
ॐ श्री त्रिपुरसुन्दर्यै नमः ।।

ॐ श्री जगदम्बिकायै नमः ।।

अम्बस्तवः चतुर्थः

ध्यान

चूरम अम्बस्तव फुोल्वुन स्वरूप चोन
आनन्द शक्ति छु व्यस्तारान
छख ज़गतमाता कारण स्वरूप किन्य
माता स्वरूप मूलप्रकृति बनान
अऽथि मातृिका स्वरूपस ज़गत अम्बा
अहमभाव मुँशिरिथ न्यथ नमन करान
छख दयालू माज्य अमृतरूपा
डेडि तंल छिय दर्शनस प्रारान
अस्य तवय गुल्य गणिडथ छिय प्यवान चेय परण
गछ़ प्रसन्न असि कर अज्ञान दूर
माता-गछ़ प्रसन्न असि कर अज्ञान दूर ।।



अथः पञ्चस्तव्यामऽम्बास्तवश्चतुर्थः

ॐ जगदम्बिकायै नमः

यामामनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं
विद्येति यां श्रुतिरहस्य-विदो वदन्ति।
तामऽर्धपल्लवित - शंकर रूप-मुद्रां
देवीमऽनन्यशरणः शरणं प्रपद्ये ।।१।।

यस रेषुँ मुनीश्वर जगतजननी वनान
वीदुँ ज्ञऽनी छिस शुद्ध-विद्या वनान
शंकर सुन्द ओड फोलमुत शरीर चुँय
आव येति सोरुय ज़गत वो'लसनस
तऽसि जगतमातायि यस रो'स बेयि नुँ कांह
आमुत शरण छुस पादन तल।

अम्ब! स्तवेषु तव तावदऽकर्तृकाणि
कुण्ठीभवन्ति वचसामऽपि गुम्फनानि।
डिम्बस्य मे स्तुतिरसावऽसमञ्जसापि
वात्सल्यनिधन हृदयां भवतीं धिनोति।।२।।

चाऽनि त्वता करनस वीद दीववाऽणी
ति अडकऽलि तुँ दमफुटि ज़न बासान
मे नादानुँ सन्ज़ इछ़ तिछ़ यि अस्तुती माज्य

करख कबूल यि छय ना भावनायि सोस
गछ़ख प्रसन्न कऽरिय खोश यि लोल हऽच पूज़ा
छु ना माजि आसान अवलाद टोठ।

व्योमेति बिन्दुरिति नाद इतीन्दुलेखा-
रूपेति वाग्भवतनूरिति मातृकेति।
निःष्यन्दमान सुखबोध सुधास्वरूपा
विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम्।।३।।

नाद ब्यन्द चिदाकाश अमाकला रूपा
वऽणी सरस्वती तॖ मातृका स्वरूप
यिमव शेयव गो'नव सोस स्वुय जगतमाता
आनन्द तॖ ज्ञान अमृत सगवान
भाग्यवान भखत्यन अमिय रूप माता
व्यकासस यिथ् मनस मंज़ वास करान
'ही जगतमाता करतॖ अनुग्रह त्युथ
युथ बेहख अमीय रूपॅ यथ मनस मंज़।।'

आविर्भवत्पुलकसन्ततिभिः शरीरै -
र्निःष्यन्दमान सलिलैर्नयनैश्च नित्यम्।
वाग्भिश्च गद्गद्पदाभिरुपासते ये
पादौ तवाम्ब! हृदयेषु भुवनेषु त एव धन्याः ।।४।।

शरीर रूम' रूम' आसि हर्शस आमुत
न्यथरव आनन्द ओ'श हारान
गद गद वऽणि लोलॅ हियकि लऽगिमुत्य

हृदयस मंज़ रटिथ चरनारब्यन्द
तिमय भाग्यवान साधक जगत्माता
चेय सुॅत्य छि ईकाकार प्रावान
निरन्तर रऽटिथ प्रकाश-विमर्श रूप पादन
त्रन भवनन मंज़ भाग्यशील बनान।।

वक्त्रं यदुद्यतमऽभिष्टुतये भवत्या-
स्तुभ्यं नमो यदपि देवि ! शिरः करोति।
चेतश्च यत्त्वयि परायणमम्ब! तानि
कस्यापि कैरपि भवन्ति तपोविशेषैः।।५।।

युस मोऽख वुह्यूग सान आसि अस्तुति करान
युस शेर न्यथ आसि चेय कुन नमान
बेयि, युस मन आसि चेय कुन शरन गछान
तिम छि साधक भाग्यवान आसान
परूज़न्मऽव तिमऽव छि आसान कॅऽरिमुत्य
कमताम तप ज़प, अदुॅ यि ध्यान बनान।

मूलालवाल कुहरादुदिता भवानि!
निर्भिद्य षट्सरसिजानि तडिल्लतेव।
भूयोऽपि तत्र विशसि ध्रुवमण्डलेन्दु-
निःष्यंदमान - परमामृततोय रूपा।।६।।

ही प्रज़लवुॅनि वुज़'मल रूप कुण्डलिनी
मूलाधार प्यठ' चुॅ वो'दयस यिवान
ब्रह्मरन्ध्रस ताम षन पम्पोशन
मंऽज़ि चटान वुज़मऽलुॅ हि'श ह्युर खसान

फेर'वुन शशिकल अमृत चुॅ सगवान
बे'यि मूलाधारस प्यठ ब्यहान ।

दग्धं यदा मदनमेकमऽनेकधा ते
मुग्धः कटाक्षविधिरङ्कुरयांचकार।
धत्ते तदाप्रभृति देवि! ललाटनेत्रं
सत्यं ह्रियेव मुकुलीकृतमिन्दुमौलिः ।।७।।

त्रयि्मि नेथरुॅ क्रूध दऽदिमुत्यस कामदीवस
चे त्रऽवुॅथ मोहिनी मऽधुर द्रष्टी
कुन कामदीव ब्ऽन्यव अनेक रूप' मात।
फो'लि टू'रि व'ऽति वऽति वुलसावनुॅऽकि
तनय प्यठ' मन्दुॅछि किन्य तऽनि महादीवन
वऽटिथ थो'व त्र'यिम न्यथर अडवो'थ सदा
' पिदान अवस्थायि किन्य ही ज़गतअम्बा
द्वैत' - भाव ज़ाव आव व्यस्तारनऽय '

अज्ञातसम्भवमना कलितान्ववायं
भिक्षुं कपालिनमवाससमद्वितीयम्।
पूर्वं करग्रहणमङ्गलतो भवत्याः
शम्भुं क एव बुबुधे गिरिराजकन्ये ।।८।।

ही हिमाल'पुत्रि कुस ज़ानान ओस
चानि अथवासुॅ ब्रोंह तस शंकरस
छुय स्वयभू मोल मा'ज्य कुस ज़ान्यस
कमि' कोलुॅ आव छुय अकुलनाथ सुय

मान अवमानु' रो'स वऽति वऽति बेछान
कलुँ खाप'ऽर ह्यथ नङ्गै दिगम्बर
तस ह्यिुह न बेयिकांह त्युथ नय द्वयुम कांह
चेय वोरुँथन अदुँ आव ज़ानुँनय
' अनुग्रह अवस्थायि किन्य ज़गतअम्बा
पारवती व्यकासुँ रूपँ ज़ाननय आव'

चर्माम्बरं च शवभस्मविलेपनं च
भिक्षाटनं च नटनं च परेतभूमौ ।
वेतालसंहतिपरिग्रहता च शम्भोः
शोभां बिभर्ति गिरिजे! तव साहचर्यात् ।।९।।

मृगछाला वऽलथि न्यथनोन फेरान
शव बस्मा मऽलिथ बिक्षाय नेरान
प्रीत भूमी शुम्शानन मंज़ नचान
वेताल भैरव कुटुम्ब ह्यथ पकान
कुन तुँ कीवल न्यथनोन सुय शंकर
चानि सहवासुँ सूत्य वोलसनस आव

कल्पोपसंहरणकेलिषु पण्डितानि
चण्डानि खण्डपरशोरपि ताण्डवानि ।
आलोकनने तव कौमलितनि मात-
र्लास्यात्मना परिणमन्ति जगद्विभूत्यै ।।१०।।

कल्पसफ्यिुर करनऽचि क्रीडायि मंज़
सु शंकर मऽकुँच ह्यथ तांडव करान

युस नुॅ जानि बेयि कांह स्व संहारुॅ मुद्रा
तस विलास दृष्टि चुॅ सुखमय करान
अदुॅ सृष्टि रछान शेरान तुॅ पऽरान
ऐश्वर्य लीला तस ति खुॅश करान
" ही जगतमाता यि वऽटुॅनुक तुॅ वाहरुॅनुक
व्यवहार छु चोनुय विकासमय स्वरूप "

जन्तोरपश्चिमतनोः सति कर्मसाम्ये
निःशेषपाशपटलच्छिदुरा निमेषात् ।
कल्याणि! दैशिककटाक्षसमाश्रयेण
कारुण्यतो भवसि शाम्भववेधदीक्षा ।।११।।

कल्याणरूपिणी! ज़वीन मोखत्यन
पुण्य पॉप सोमगछान ज़ेऽत मरुॅ चलान
अनुग्रह चानि सतगुरुॅ संज़ि द्रष्टियि्
क्षनमात्रस मंज़ कर्म-खुॅरि छ़ेनान
शैवशास्त्रन हुन्द ज्ञान कुण्डलिनी यूग
चाऽनी दयायि किन्य तिम छि ज़ानान ।।

मुक्ताविभूषणवती नवविद्रुमाभा
यच्चेतसि स्फुरसि तारकितेव सन्ध्या ।
एकः स एव भुवनत्रयसुन्दरीणां
कन्दर्पतां व्रजति पञ्चशरीं विनापि ।।१२।।

नऽवि लुदुॅरुॅ रंगुॅ हिश दीप्ति मोखस प्यठ
आभूषण मोखतऽकिं पाऽरिथ

सन्ध्या तारख' नब हिश फोजिमुऽच़
युस यिथि रूपुॅ कऽरि साक्षात्कार
सुय बऽखुॅति कामदीव पांछ़ तीरुॅ रोस्तुॅय
ईन्द्रय शखतियन छु सऽमी बनान

ये भावयन्त्यमृतवाहिभिरंशुजालैर्
आप्यायमान भुवनाममृतेश्वरीं त्वाम् ।
ते लङ्घयन्ति ननु मातरलङ्घनीयां
ब्रह्मादिभिः सुरवरैरपि कालकक्ष्याम् ।।१३।।

अमृत' ईश्वरी चाञ्यव ज़ॅऽच़व सूत्य
त्रन भवनन छु अमृतुॅ स़ग लगान्
ईकागर च़्यथ न्यथ यिम यि ध्यान करान्
काल कलनायि तिम छि ज़ीनिथ निवान
यथ न ब्रह्मा ईत्यादय्क ति ह्योक तऽरिथुॅय
तऽथि कालस छि तिम भखऽत्य अपोर तरान

यः स्फाटिकाक्षगुण पुस्तककुण्डिकाढ्यां
व्याख्यासमुद्यतकरां शरदिन्दुशुभ्राम् ।
पद्मासनां च हृदये भवतीमुपास्ते
मातः स विश्वकवितार्किक चक्रवर्ती ।।१४।।

ही भवाऽनी युस हृदयम मंज़ रऽटि
युथ ध्यान चोन बे़यि करि उपासना
च़तुर्बुज़ दाऽरी पदमासनस प्यठ
कारतिकुॅ जून ह्यिश नपुॅ नपुॅ करान

अथन स्वठकुँ ज़ऽप माल, पूथि, बेयि कमण्डल
चूरिमिस अथस व्याख्या मुद्रा
अमिय ध्यानुँ साधक कवियन हुन्द कवि
व्यदवानन हुन्द सरताज बनान

बर्हावतंस-युतबर्बरकेशपाशां
गुञ्जावली कृतघनस्तनहारशोभाम्।
श्यामां प्रवालवदनां सुकुमारहस्तां
त्वामेव नौमि शवरीं शवरस्य जायाम्।।१५।।

मोरुँ पंख ताज यस बबरि-ह्विव्य शाम केश
चमकान वऽछस प्यठ रऽचुँफऽलि माल
शाम रंगुँ शरीर तै लोद्रुँ मुखँ चे दिफ्ती
नोजुख अथव सोस्त चुँ शिव शक्ती
शिव शिकऽरि रुपुँ तुँ शवरी रूप चे माता
चेय शरण आमुत्य छि अस्तुती करान

अर्धेन किं नवलताललितेन मुग्धे!
क्रीतं विभोः परुषमर्धमिदं त्वयेति
आलीजनस्य परिहासवचांसि मन्ये
मन्दस्मितेन तव देवि ! जडी भवन्ति।।१६।।

ही मनमोहिनी निर्मल पार्वती
चोन रूप ज़न कोमल पोशुँथऽरुँ
कवुँ ह्यतुथ ओ'ड शरीर तस कठोर शंकरस
योरुँ द्युतथस कोमल ओ'ड शरीर

अथ सोदाहस प्यठ सखियव ह्युडहय
कऽरि थक अऽकि दृष्टि अडकऽल्य

ब्रह्माण्डबुद्बुदकदम्बकसंकुलोऽयं
मायोदधिर्विविध-दुख-तरङ्ग मालः।
आश्चर्यमम्ब! झटिति प्रलयं प्रयाति
त्वद्ध्यान सन्ततिमहावडवामुखाग्नौ।।१७।।

मायायि हन्दिसुय यथ सऽदुॅरस मंज़
यीरान ब्रमाण्ड काऽति फोकुॅडून्य ज़न
अऽथि वुसद्रुस किस दुॅख सागरस मंज़
त्रिशंकार्य-सन्ताप लहर' मारान
यिथिस घटकारस मंज़ चोनुय ध्यान
वाडवअग्नि बुॅऽनिथ चु दुॅख ज़ालान।
आश्चर्य मायायि हऽन्दि दुॅख सागर
तस नय वलान सुॅ चेय मंज़ लय गछान

दाक्षायणीति कुटिलेति गुहारणीति
कात्यायनीति कमलेति कलावतीति।
एका सती भगवती परमार्थतोऽपि
सन्दृश्यसे बहुविधा ननु नर्तकीव।।१८।।

दक्षपुत्री सती तुॅ कुटिला कुण्डलिनी
मनॅ गुफायि मंज़ उमा चेतनारूप
कात्यायनी-कमला-कलावती ति च्य
गतरेऽनि हुन्दि पाऽठि चुॅ रूप दारुवुन

परमार्थ दृष्टि किन्य चुँ कुञ् भगवती
चोनुय यि व्यवहार चुँपऽरि माता

आनन्दलक्षणँमनाहतनाम्नि देशे
नादात्मना परिणतं तव रूपमीशे
प्रत्यङ्मुखेन मनसा परिचीयमानं
शंसन्ति नेत्रसलिलैः पुलकैश्च धन्याः ।।१९।।

ही ज़गतईश्वरी आनन्द रूपा
भाग्यवान छि तिम यिमन युथ व्यकास बनान
अनाहतनाद ब्यन्द नाद बुज़नऽविथ्
अन्तरमुँखुँ चोन दरशुन करान
हरशस युथ गछ़ान वरणन क्याह करन
आनन्द ओश बस न्यथर्व हरान

त्वं चन्द्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रूचिस्त्वं
त्वं चेतनासि पुरुषे पवने बलं त्वम् ।
त्वं स्वादुतासि सलिले शिखिनि त्वमूष्मा
निःसारमेव निखिलं त्वदृते यदि स्यात् ।।२०।।

चन्द्रऽमुक जूनगाश सिर्यस सिरिय् प्रकाश
वायोस मंज़ बल ज़लस मंज़ स्वाद
अग्नस म ज़ तऽचर मनुष्यन मंज़ ह्यस
यिमव गुँनव रोस न यिम छि माने थ्वान
ही ज़गतव्यापिनी यिम गुँण यिमन चुय
चोन आसनुय यिमन बासुन दिवान

ज्योतींषि यद्दिवि चरन्ति यदन्तरिक्षं
सूते पयांसि यदहिर्धरणीं च धत्ते
यद्वाति वायुरनलो यदुदर्चिरास्ते
तत्सर्वमम्ब! तव केवलमाज्ञयैव ।।२१।।

तार'ख ग्रिहऽदि आकाशस प्यठ नऽच़ान
वायू मण्डल छु ज़ल, तुॅ वर्षा दिवान
शीशनाग् छु प्रथवी शेरि प्यठ दऽरिथ
वायू छु फेरान अ'ग्न रेह छ़टान
यिमन सारिनय मंज़ नेरुॅनुॅच तुॅ फेरुॅनुॅच
शखती, बस चानि हुक्मुॅ किन्य चलान

संकोचमृच्छसि यदा गिरजे! तदानीं
वाक्तर्कयोस्त्वमसि भूमिरनाम रूपा!।
यद्वा विकासमुपयासि यदा तदानीं
त्वन्नामरूपगणना: सुकरी भवन्ति।।२२।।

ही पारवती यलि खटनुक स्वरूप छख
संकोच भावुॅ चुॅय दारन करान
वऽणी तर्क छु नुॅ त्युथ कांह माता
बोविथ ह्यकान अथ अनाम रूपस
आश्चर्य यलि छख व्यकास भाव हावान
रूप तुॅ नाव चऽनि छ्रिनुॅ ग्रन्ज़ मंज़ यिवान

भोगाय देवि ! भवतीं कृतिन: प्रणम्य
भ्रूकिंकरीकृतसरोजगृहा सहस्रा: ।

चिन्तामणि-प्रचयकल्पितकेलिशैले
कल्पद्रुमोपवन एव चिरं रमन्ते ।।२३।।

ही दीवी यिम सुख भू'ग बापथ
न्यथ प्रथ छिय करान चेय कुन प्रणाम
तिमनक्रयावानन सासुॅब्जुॅ लक्षमियि
बुंम्बुॅ क्यन इशारन रोज़ान वश
चिन्तामणी रतुॅनन हुॅन्दि परबत
कल्पवृक्ष कुल्यव सुत्य बऽरि बऽरि बाग
यिमनुॅय सुॅख सागरन मंज़ छि फेरान
कर्मफल भूगान त' भूगन' नुॅ लऽरि।

हन्तुं त्वमेव भवसि त्वदधीनमीशे !
संसारतापमखिलं दयया पशूनाम ।
वैकर्तनीकिरणसंहतिरेव शक्ता
धर्मं निजं शमयितुं निजयैव वृष्ट्या ।।२४।।

ही स्वतंत्र रूपा शखती माता
च़'य छख कारणन हऽज़ कारण
ज़े'न मरनऽकि संताप यिम छि ज़वीन
च़ेय अऽदीन च़य तिम दूर करान
यिथुॅ पाऽठि सिर्य भगवान तापुॅ ज़ालान
सुय ओबुर तुलान तुॅ रूदुॅ शेहलावान

शक्तिः शरीरमधिदैवतमन्तरात्मा
ज्ञानं क्रिया करणमासंनजालमिच्छा

ऐश्वर्यमायतनमावरणानि च त्वं
किं तन्न यदभवसि देवि! शशाङ्कमौले ।।२५।।

शिवस शक्ति शरीर दीवरूप तुॅ आत्मा
ज्ञान क्रिया आसनजाल यच्छ़ा ति चुॅय
ऐश्वर्य चुॅय शिवलूक चुॅय आसान
आश्रय तुॅ खटवुन्यन मलन आ़वरुन
चन्द्रमुॅकला यस मुकुटस छि आसवुन्य
तस शिवस क्या छु युस नुॅ केवल चुॅय

भूमौ निवृत्तिरुदिता पयसा प्रतिष्ठा
विद्याऽनले मरुति शान्तिरतीतशान्तिः ।
व्योम्नीति याः किल कलाः कलयन्ति विश्वं
तासां विदूरतरमम्ब! पदं त्वदीयम् ।।२६।।

ही ज़गतअम्बा पांच़व कलायव
शेयत्रहव तुॅत्व जगतस चुॅ व्याऽपिथ
प्रथवी तॅत्त्वस मंज़ युऽसुॅ कला निवृति
ज़लतुॅत्त्वस मंज़ छय प्रतिष्ठा कला
अग्नस मंज युऽस छि विद्याकला बेयि
वायू तुॅत्त्व़स मंज़ छि शान्ति कला
शान्त्यतीता कला युऽस नबस व्याऽपिथ
तिमन सारिन्य अपोर दूर चोन धामे

यावत्पदं पदसरोजयुगं त्वदीयं
नाङ्गीकरोति हृदयेषु जगच्छरण्ये ।

तावद्विकल्प-जटिलाः कुटिलप्रकारा-
स्तर्कग्रहाः समयिनां प्रलयं न यान्ति ।।२७।।

ही ज़गतन हंऽज़ रछवुॅन्य माता
योत्ताम नुॅ चाऽनि चरण बेहन हृदयस मंज़
तोत-ताम ब्योन ब्योन मतवाऽदी माता
वादव्यवादुॅक्यन खुरेयन मंज़ छि यीरान
बस प्रकाश विमर्श पाद यऽलि बेऽहन मनस मंज
पऽ तुॅ छुॅ नुॅ रोज़ान केन्ह ति दऽलुॅनुय

यद्देवयानपितृयानविहारमेके
कृत्वा मनः करणमण्डलसार्वभौमम् ।
याने निवेश्य तव कारणपंचकस्य
पर्वाणि पार्वति नयन्ति निजासनत्वम् ।।२८।।

ही पार्वती केन्ह क्रयावान साधक
प्राण अपाण गऽच्छुॅन्य छिय करान वश
मनस यन्द्रियन हुन्द स्वामी बऽनाऽविथ
फिरवान प्राणन सुषुम्नायि मऽन्ज़ि
चेय सूत्य लय गछिथ शिवदाम प्रावान
पांचन कारणन ति ह्योर छि वातान

स्थूलासु मूर्तिषु महीप्रमुखासु मूर्तेः
कस्याश्चनापि तव वैभवमम्ब यस्याः ।
पत्या गिरामपि न शक्यत एव वक्तुं
सासि स्तुता किल मयेति तितिक्षितव्यम् ।।२९।।

प्रथवी ईत्याद्यक स्थूल रूप छि चाऽनी
यिम अख अकिस खोतुं शूभायमान
ब्रहस्पति-पाद वाऽणियन हन्दि साऽमी
अऽकसि ति रूपस नुं वर्णन ह्यकान करिथ
तऽसि ज़गत अम्बायि छुस बुं अस्तुती करान
योंद गऽछ्य्म ह्योर बोंन मे करिज़्यम क्षमा

कालाग्निकोटिरुचिमम्ब! षडध्वशुद्धा-
वाप्लावनेषु भवतीममृतौधवृष्टिम् ।
श्यामां घनस्तनतटां सकलीकृतौ च
ध्यायन्त एव जगतां गुरुवो भवन्ति ।।३०।।

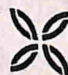
शेयि वऽति स्वरूपुंकिस यथ संसारस
शुद्ध करनस चुं कालाग्नि बनान
यिमन भवनन रछनस तुं पाऽरुंनस प्यठ
अमृत वरशुनुं स्वरूप चुं दारान
हे'रि बो'नुं शनवऽन्य ईकूत करनस
श्याम रंगुं थऽदि वऽछि चु काम-कला
यिम यिथि रुपुं चाऽनि धारणा दारान
तिमैय त्रन ज़गतन ग्वर छिय बनान

विद्यां परां कतिचिदम्बरम्ब केचि-
दानन्दमेव कतिचित्कतिचिच्च मायाम् ।
त्वां विश्वमाहुरपरे वयमामनाम
साक्षादपारकरुणां गुरुमूर्तिमेव ।।३१।।

केन्ह चे़य परा विद्या रूप छिय मानांन
केन्ह वनान विशाल शुन्य आकाश रूप
केन्ह आनन्द रूप केन्ह माया स्वरूप
केन्ह ज़गतस्वरूपुँ केन्ह विश्व रूप चुँय
अस्य सेद्य तुँ सादुँ छिय ही ज़गतमाता
दया ममता बऽरिथ गुरुँ स्वरूप वनान

कुवलयदलनीलं बर्बरस्निग्धकेशं
पृथुतरकुचभाराक्रान्तकान्तावलग्नम् ।
किमिह बहुभिरुक्तैस्त्वत्स्वरूपं परं नः
सकलभुवनमातः सन्ततं सन्निधत्ताम् ।।३२।।

नीलि पम्पोश' रंगुँ श्याम रूप शरीर छुय
बऽबुँरि लन्जि हिय कोमल छिय केश
थदि बछि भारँ सुन्दर कमर नऽम्योमुत
यिथुय शूभवुन चोन कामकला रूप
वनुँ कोताह बेयि चोनुय बजर माज्य
छख त्रन भवनन हऽन्ज़ माता
छम मे कुज्य तुँ कीवल यहय व्यनती अज़
न्यथ वऽछुँ हा चोनुय यहऽय स्वरूप



ग्वुर अस्तुति

प्रो० ओंकारनाथ चंगू

बऽबु भुगवानुं रोज़ आऽसि अज़ दयाये
अऽसि आमुत्य छिय माये सान
शरनागतन रोज़ि बऽब सदा सहाये
अऽसि आमुत्य छिय माये सान --
अऽसि छिय मंगनस अऽकऽलि गऽमुत्य
छुख ज़ानान चेयि निष आमुत्य
हारुँमालि पारिज़ात कुल दियुत डाले - अऽसि आमुत्य०
मुह मायायि वऽलि येति अऽसि साऽरिय
कड अऽमि ज़ाल मंजु बोज़ ज़ाऽरीय
चानि दरबारुँ सारिनुंय आशाये - अऽसि आमुत्य०
चिल्मा रऽटिथुँय शिव रूप दारान
दून्या ब्रोंठ कऽनि शोल मारान
अमि रूप भखत्यन दियुत वरदाये - अऽसि मआमुत्य
यनुं ज़नमन आय ताऽनु वऽलि द्वयतन
चठ हांऽकऽलु रोज़ि शुद्ध चयन्तन
स्मुरण चऽनि तारि भवसर नावे - अऽसि आमुत्य०
स्यद मंत्र ग्रज़ छि आश्रम चाने
यि मंत्र मल साऽरिय गाले
ओं नमो भगवते गोपीनाथये - अऽसि आमुत्य
ग्वर द्वारें ग्वुरुं मूर्त यिछ़ छि आरवुन्य
ब्रह्मा वेष्ण शिव सुय आसवुन
यि ज़ान ज़ानि पान युस ताऽसि पुशरावे - अऽसिआमुत्य
हरणुं टुंऽकि शेष्य गऽछि ग्वरुं सुऽय छांडुन
बावथ सुय कऽरेस अऽति छु आसवुन
यि ब्रम चऽलि गछ़ शरण बबुं सन्ज़ि ब्रावे- अऽसि आमुत्य

